परमाणु ऊर्जा शिक्षण संस्था, मुंबई

हिन्दी-11

कबीर मॉड्यूल-2

Handout

कबीर का जन्म 1398 ई. में काशी में हुआ और मृत्यु 1518 ई. में मगहर में हुआ। उनके बारे में अनेक किंवदंतियाँ मिलती हैं। उन्हें नीरू और नीमा नामक जुलाहा दंपति ने पाला-पोसा। कबीर पढे-लिखे नहीं थे किन्तु उनका ज्ञान और अनुभव अपार था। कबीर के समय भारतीय समाज में अनेक अंधविश्वास और धार्मिक आडंबर व्याप्त थे। हिन्दू-मुसलमानों के विश्वासों और मान्यताओं में विषमता बढ़ रही थी। समाज कठिन परिवर्तन के दौर से गुजर रहा था। कबीर ने ऐसे आडंबरों और कुरीतियों का विरोध किया और उनपर तीखा प्रहार किया। कबीर का विश्वास था कि प्रेमपूर्ण भक्ति से ईश्वर को प्राप्त किया जा सकता हैं,दिखावे से नहीं।

कबीर ने पद लिखे नहीं,गाए हैं। उनकी शिष्य-परंपरा में कबीर कि रचनाएँ मौखिक रूप से जीवित रहीं। उनका एकमात्र संग्रह 'बीजक' नाम से प्राप्त होता है, जिसके तीन भाग हैं- साखी,सबद और रमैनी ।

कबीर ने दोहा-चौपाई और पद शैली का प्रायः प्रयोग किया है। साखियों की भाषा राजस्थानी या पंजाबी मिश्रित हिन्दी है।'रमैनी' और 'सबद' की भाषा पूरबी हिन्दी के निकट है।कबीर की भाषा में उनके स्वभाव के फक्कड़पन,मस्तमौलापन,साफ़गोई और निर्भीकता के दर्शन होते हैं।

कबीर बाह्य आडंबर करने वालों पर कटाक्ष करते हुए कहते हैं कि - हे साधको, देखो, इस संसार के लोग बौरा गए हैं, पागल हो गए हैं। यदि उन्हें सच्ची बात कही जाती है तो वे मारने को दौड़ते है। वे नाराज हो जाते हैं। वहीं झूठी बातों पर वे विश्वास कर लेते हैं।

कबीर ढोंग और आडंबरों का विरोध करते हुए कहते हैं कि मुझे नियम, धर्म,दिनचर्या आदि का कठोरता से पालन करने वाले बहुत संत मिले। वे प्रातः स्नान करते हैं। परंतु वे स्वयं के अंदर विद्यमान ईश्वर को छोड़कर व्यर्थ के नियमों और व्रतों में उलझ जाते हैं। वे पत्थर की पूजा करते हैं, उनका ज्ञान बेकार हो जाता है।

हिन्दू और मुसलमान दोनों की आलोचना करते हुए कबीर कहते हैं कि मैंने बहुत से पीर-औलिया,पीर -पैगंबर देखे हैं, जो अपने शिष्यों को धार्मिक ग्रंथ पढ़ाते हैं, स्वयं भी पढ़ते हैं।वे शिष्य बनाकर उन्हें ईश्वर प्राप्ति के तरह-तरह के उपाय बताते हैं।वास्तव में ये पीर-औलिया कुछ नहीं जानते हैं। वे स्वयं ईश्वर प्राप्ति के रास्ते से अनजान हैं।ऐसे पाखंडियों ने ईश्वर को जाना ही नहीं है। जो साधक समाधि की मुद्रा में आसान लगाकर बैठते हैं, जिन्हें स्वयं के साधक होने का बहुत घमंड है, जो पीपल और पत्थर की पूजा करते हैं, जगह-जगह तीर्थ यात्राएँ करते हैं,

वास्तव में उनके ये कार्य साधना के नाम पर छल और भुलावा हैं। ये टोपी पहनते हैं, गले में माला धारण करते हैं, तिलक-छाप लगाते हैं तथा साखी-सबद गाते हैं।उनके ये सभी काम उनके पाखंड को बतलाते हैं। आत्मा में ही परमात्मा का निवास है, उन्हें इसका ज्ञान नहीं है। हिन्दू राम को प्यारा बतलाता है तो मुसलमान रहीम को प्यार बतलाता है।राम और रहीम के नाम पर दोनों लड़ते रहते हैं। सच्चाई यह है कि न हिन्दू को ईश्वर की पहचान है न मुसलमान को ईश्वर की पहचान है। ईश्वर के नाम पर लड़ने वाला मूर्ख और अज्ञानी है। ऐसे पाखंडी लोग घर-घर जाकर लोगों को गुरु-मंत्र बाँट रहे हैं। ये स्वयं को बहुत ही महिमामंडित बतलाते हैं, समझते हैं । ऐसे गुरु ,गुरु नहीं हैं , बहुत बड़े अभिमानी हैं। ये अपने पाखंडों के कारण स्वयं तो डूबते ही हैं , इनके अनुसार चलने वाले इनके शिष्य भी डूब जाते हैं। बस और बस वे केवल पछताते रह जाते हैं।

इसलिए कबीर कहते हैं - हे संतो, ये सब पाखंडी हैं , ये भ्रम में ईश्वर को भूले हुए हैं। कबीर इनसे बहुत कहते हैं, बहुत समझाते हैं, किन्तु ये मानते नहीं हैं। वास्तव में ईश्वर सहज है। वे सहज-साधना से प्राप्य हैं। ज्ञानी संत सहज-स्वाभाविक प्रेम से उस ईश्वर को प्राप्त कर लेते हैं।

विशेष-

यहाँ कबीर का अक्खड़,फकखड़ और निर्भीक स्वभाव दिखाई देता है। कबीर ने आत्म-तत्व पर बल देते हुए लोगों द्वारा अपनाए जानेवाले बाह्यदम्बरों का विरोध किया है। इसमें धार्मिक आडंबरों पर गिन-गिनकर चोट की गई है। मूर्तिपूजा पिपलपूजा,छापतिलक,पत्थर पूजा इत्यादि का कबीर ने विरोध किया है। साथ ही उन्होंने अभिमान युक्त गुरुओं द्वारा शिष्य बनाने की परंपरा को भी अनुचित ठहराया है।

वस्तुतः कबीर ने हिन्दू और मुसलमानों दोनों की वाहयाडंबरों पर प्रहार किया है। इसलिए दोनों ही जातियाँ उन्हें अपना महापुरुष मानती हैं। वे गुरु को परमात्मा से भी ऊँचा मानते हैं। लेकिन ढोंगी धर्मगुरुओं पर प्रहार करते हैं।

पद में अनुप्रास और पुनरुक्त प्रकाश अलंकारो का प्रयोग हुआ है।

शांत रस और प्रसाद गुण गुण हैं।

यहाँ व्यंग्य की पैनी धार है।

कबीर का विद्रोहात्मक स्वर मुखरित हुआ है।